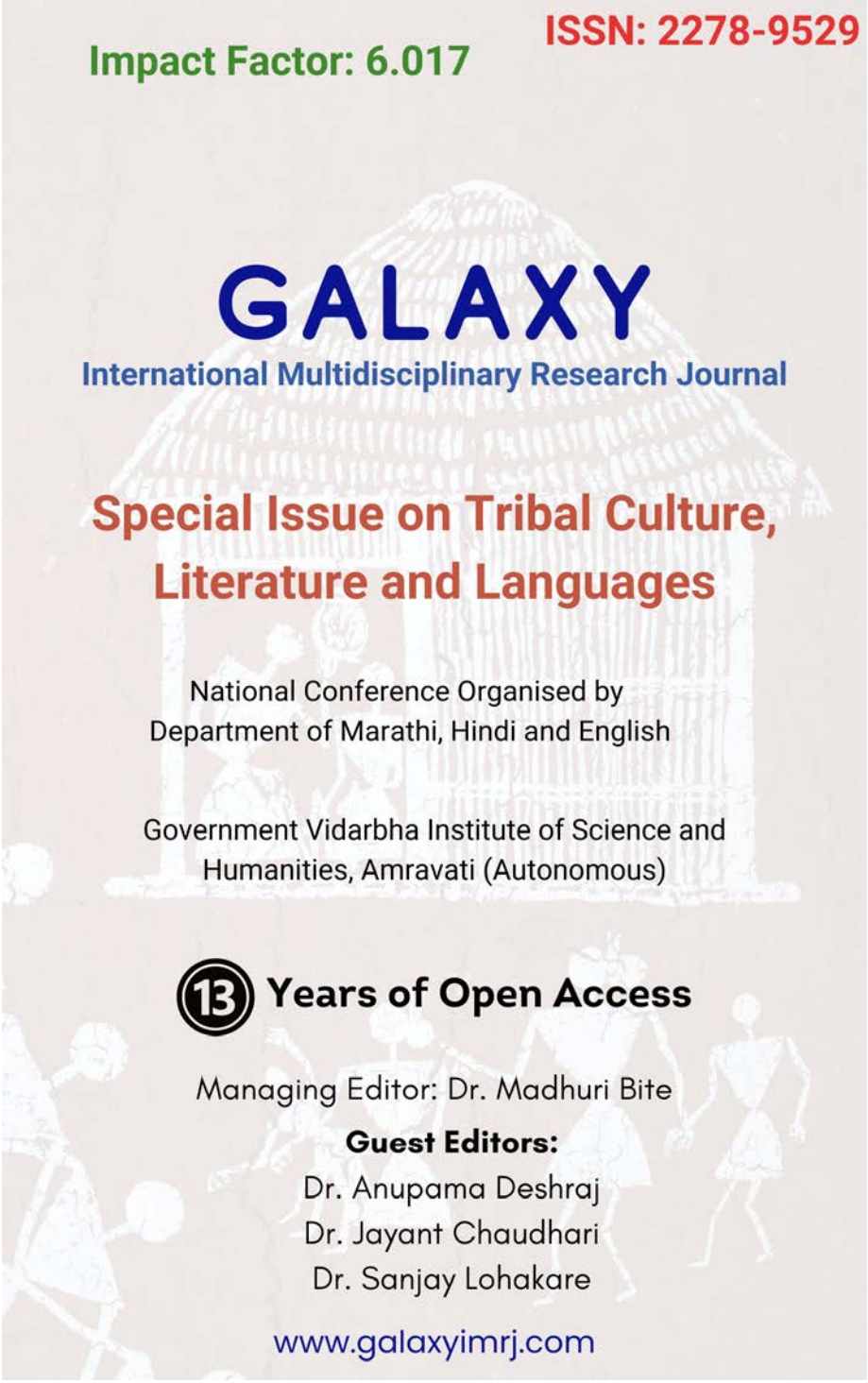

About Us: http://www.galaxyimrj.com/about-us/
Archive: http://www.galaxyimrj.com/archive/
Contact Us: http://www.galaxyimrj.com/contact-us/
Editorial Board: http://www.galaxyimrj.com/editorial-board/
Submission: http://www.galaxyimrj.com/submission/
FAQ: http://www.galaxyimrj.com/faq/

गाय-गेका की औरतें में चित्रित न्यीशी समुदाय की सांस्कृतिक चेतना

गायत्री लक्ष्मी एम. वी.
शोधार्थी, हिन्दी विभाग,
गाँधीग्राम ग्रामीण संस्था (मानद विश्वविद्यालय),
गाँधीग्राम - 624 302, दिन्डुक्कल,
तमिलनाडु, भारत.

आलेख सार :

आदिवासी साहित्य की प्रसिद्ध लेखिका जोराम यालाम नाबाम कृत संस्मरण *'गाय-गेका की औरतें'* में इस न्यीशी जनजाति के जीवन यापन का यथार्थ चित्रण यादों के झरोखे से कूट-कूट कर प्रस्तुत किया गया है। न्यीशी समुदाय भारत के राज्य अरुणाचल प्रदेश की जनजाति है। दुनिया भर के सभी आदिवासी समुदायों की तरह न्यीशी जनजाति के भी अपने विशिष्ट जीवन मूल्य, परिवार-प्रणाली, सामुदायिक और पारंपरिक-धार्मिक विश्वास, रीति-रिवाज़, त्यौहार, भाषा, खान-पान, वेष-भूषण, आर्थिक व्यवस्था और पर्यावरणीय सरोकार होते हैं। यह शोध-पत्र न्यीशी जनजाति के विभिन्न सांस्कृतिक पहलुओं को समन्वेषण करने और इसकी अद्‌वितीय विशिष्टता को पहचानने और प्रस्तुत करने का एक प्रयास है।

बीज-शब्द : न्यीशी जनजाति, यूल्लो उई, सिम्‌ई दनाम, रे, न्योकुम उई, सा-ताल्ल, स्थानीय भाषा।

मूल आलेख :

समकालीन आदिवासी लेखन जगत के सुप्रसिद्ध कहानीकार, उपन्यासकार और कवयित्री जोराम यालाम नाबाम अरुणाचल प्रदेश के निवासी हैं। जोराम यालाम राजीव गाँधी विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के सहायक प्रोफेसर हैं। इनकी प्रकाशित रचनाएँ *'साक्षी है पीपल'* (कहानी संग्रह),

'जंगली फूल' (उपन्यास), *'गाय-गेका की औरतें'* (संस्मरण), *'न्यीशी समाज ; भाषिक अध्ययन'* (शोध) और *'तानी कथाएँ : अरुणाचल के तानी आदिवासी समाज की विश्वदृष्टि'* (लोक कथा विश्लेषण) आदि हैं। इनके रचना संसार में आदिवासी लोगों की संस्कृति, अस्मिता और प्रगति पर स्वर उठाया गया है।

न्यीशी जनजाति पूर्वोत्तर भारत अरुणाचल प्रदेश में वास करने वाली प्रमुख जनजातियों में से एक है। इस जनजाति के लोग 'न्यीशी' भाषा बोलते हैं। ये अधिकतर अरुणाचल प्रदेश के साथ गाँवों में निवास करते हैं - पूर्वी कामेंग, पक्के केसांग, पापुम परे, सुबन सीरी, कमले, क्रा डाडी, कुरुंग कुमे। असम के सोनीपुर और लखिमपुर प्रांत में भी निवास करते हैं। जोराम यालाम नाबाम कृत संस्मरण *'गाय-गेका की औरतें'* न्यीशी समाज के जीवन शैली का दस्तावेज़ है। न्यीशी समाज के जीवन के विभिन्न पहलुओं का यथार्थ चित्रण यादों के झरोखे से लेखिका प्रस्तुत करती हैं। इसमें व्यक्तिगत जीवन दृष्टि से लेकर परिवार में होने वाली छोटी घटनाएँ, सामूहिक विश्वास, दार्शनिक मान्यताएँ, रीति-रिवाज़, त्यौहार, लोक गीत और नाट्य, न्यीशी भाषा के शब्द और कहावत तक इस संस्मरण में दृष्टिगोचर है। '*गाय-गेका की औरतें'* संस्मरण का दस शीर्षक में विभाजित है - *'जोराम स्कूल में मेरा बचपन', 'तअर पोख', 'चिड़िया का वह बच्चा', 'मूक रिश्ते', 'गाय-गेका की औरतें', 'रे', 'रंग और मेरी माँ', 'मेरा नाम यालाम है', 'मई (मौसी)' और 'न्योकुम उई'।*

संस्कृति हर समाज का संपत्ति है जिससे व्यक्ति अपनी निजी रचनात्मक प्रक्रिया को प्रकट करता है। संस्कृति की छोटी इकाइयों जैसे परम्परागत कला, साहित्य, गीत, नाट्य, रीति-रिवाज़, भाषा, दार्शनिक दृष्टि, धार्मिक-आध्यात्मिक मान्यताएँ आदि से व्यक्ति लोक कल्याण के हितकारी और बहुमूल्य मूल्यों और विचारों को रागात्मक और लयात्मक ढंग से आदान प्रदान करता है। लेखिका के शब्दों में अपनी संस्कृति की अस्मिता का स्वर उठाया गया है - "वह जो दुनिया को खूबसूरत बनाने में कुछ योगदान दे सकें - आत्मा की कुरूपता को धवल चाँदनी में नहला सकें।

ऐसी पारम्परिक चीजें अथवा रीति-रिवाज जिसने हमारे समाज को एकता के सूत्र में बाँध रखा - सदियों तक। xxx हमारा जीवन-दर्शन इनमें प्रत्यक्ष देखा जा सकता है। इस चीजों के बारे में गहराई से खूब लिखा जाना चाहिए इनमें हमारा इतिहास है हमारे उद्‌गम की कथा इन्हीं में कहीं दफन हो गई आध्यात्मिक संकेत भी है।"[1]

जोराम यालाम नाबाम 'चिड़िया का वह बच्चा' नामक शीर्षक में 'यूल्लो उई' रिवाज़ का ज़िक्र करती हैं। यह इस प्रकार का रिवाज़ है जिसमें "पूरे खानदान के अच्छे स्वास्थ्य, धनधान्य, अच्छे भविष्य तथा बुरी नजर से बचाव के लिए किया जाता है।"[2] यह दो साल या कई सालों में एक बार 'उईयु' को बलि अर्पित की जाती है। इस रिवाज़ में सारे गाँव वालों वहाँ इस्तेमाल हो हैं। वेदी निर्माण के लिए तीन या चार 'न्यूब' अर्थात पुजारी वहाँ मौजूद होते हैं। इस रिवाज़ के दूसरे दिन बलि प्रथा का पालन होता है। इसका वर्णन लेखिका इस प्रकार व्यक्त करती हैं - "दूसरे दिन बलि के लिए मिथुन, सूअर, मुर्गियाँ और न जाने क्या-क्या... xxx जब किसी निरीह जानवर को वेदी में बाँधकर तेज धार वाली कुल्हाड़ी से उसके गले को सहरी से अलग कर दिया जाता - महीनों वह दृश्य मेरी स्मृति में छाया रहता।"[3] इसमें लेखिका इस प्रथा और वर्तमान काल में लोगों की आदत दोनों को तुलनात्मक दृष्टि से देखकर कहती हैं - "भले यह प्रथा हिंसक लगे, लेकिन इसी प्रथा के कारण गाँव वाले मांस अधिक नहीं खाते। xxx वर्तमान में तो लोग हर दिन पशुओं की हत्या करते हैं, हर दिन क्या, दिन में तीन-चार बार भी मीट खाते हैं।"[4] इस बलि प्रथा को आध्यात्मिक चश्मे से देखकर लेखिका अपनी दृष्टि व्यक्त करते हुए कहती हैं - "हमारा आदिवासी समाज प्रकृति को अपना परिवार मानता है। किसी समय शिकार पर जीवन निर्भर था। ऐसे में पशु मांस अनिवार्य और आदत बन जाती है। इससे कहीं-न-कहीं पछतावा, पशचापात या ग्लानि रही होगी। ऐसे में आध्यात्मिक ढंग से मांस का उपयोग करना उचित लगा होगा - यही बलि प्रथा कहलाई। प्रकृति सब कुछ देती है। हमारी साँसे तक उसकी हैं। मनुष्य उस पर आश्रित है। यश भी

कारण रहा होगा कि हम वापसी में अपने किसी प्रिय पशु की बलि चढ़ाएँ, धन्यवाद दें और देने का भाव भी बना रहे। इस देने के भाव में मनुष्य का अपना अहं भी है। इससे यह भाव आता है कि हम मुफ़्त में नहीं ले रहे, लें-दें कर रहे हैं।"[5] तीन दिन की इस प्रथा में तीसरे दिन ही लोग घर से बाहर आते हैं। घरेलू चीज़ों माँगने और इकट्ठा करने पर भी मनाही होती है। जोर से बात करने और चिल्लाने पर भी मनाही है। लोक मानस में यह विश्वास है कि इस प्रथा के तीसरे दिन में "उईयु अर्थात प्रकृति की अदृश्य शक्तियाँ और अतृप्त मृत आत्माएँ इस वक्त चहलकदमी करती हैं। मिट्टी खोदने का काम सख्त मना है। कुछ दिनों तक जंगली फलों का सेवन नहीं करना; नहीं तो गले में बहुत बाद फलनुमा आकार निकल जाएगा।"[6]

हर एक व्यक्ति अपने जीवन काल में अनेक भावनाएँ महसूस करके जीना पड़ता है। कभी-कभी वह गलतफ़हमी के कारण अपने परिवार वालों या मित्रों से वियुक्त होना पड़ता है। लेकिन अपने जीवन के अंतिम काल में बुढ़ापा की नम्रता के कारण मरने के समय आने पर सब वैमनस्य को मिटाना के लिए मन तड़पता है। इस सुंदर विषय पर एक रिवाज़ का पालन करना एक अद्भुत बात है, जो न्यीशी समुदाय 'सिम्ई दनाम' के नाम पर पालन करते हैं। 'मीम्पुंग और हिन्दी भाषा' नामक शीर्षक में लेखिका 'सिम्ई दनाम' का रिवाज़ का उल्लेख करती हैं। इस रिवाज़ के अनुसार "लोग अपने जीवन के अंतिम दिनों में रिश्तेदारों को आमंत्रित करते हैं। एक भोज का आयोजन होता है। सभी लोग बीमार व्यक्ति से मिलते-बतियाते हैं। अपना अंतिम संदेश व्यक्ति देता है। कई बातें होती हैं। कोई अधूरी बात रह गई हो, उस पर भी चर्चा की जाती है।"[7] इस रिवाज़ में मरने की स्थिति में व्यक्ति अपनी अंतिम इच्छा को प्रकट करता है। इस दिन जो कुछ वह कहता उस बात अत्यन्त महत्वपूर्ण माना जाता है। इस भोजन के दौर पर सामंजस्य भाव उत्पन्न होकर सभी तरह के आपसी-वैमनस्य भाव उगाया जाता है। माना जाता है कि इस रिवाज़ के अभाव पर

मृत आत्मा अपने पूर्वजों के पास न जाकर इस संसार के हलचल में रहकर अपने रिश्तेदारों को परेशान करेगी।

जोराम गाँव का 'रे' रिवाज़ का उल्लेख इस संस्मरण के 'रे' शीर्षक के अंतर्गत करती हैं। इस रिवाज़ के नियमानुसार किसी एक परिवार के खेत पर गाँव के प्रत्येक घर से कोई-न-कोई आदमी भाग लेते हैं। ऐसा गाँव वाले एकत्रित होकर एक दूसरे की मदद करते हैं। घास छीलने, उसको जलाने, धान रोपने-काटने के काम सब लोग मिलकर करते हैं। इसका एक नियम होता है- "किसी परिवार के यहाँ से 'रे' के रूप में एक आदमी आता है किसी के खेत में, तो उसी के अनुसार बदले में उसके भी खेत पर एक आदमी ही 'रे' जाता। इसी तरह दो, या तीन अपनी सुविधानुसार लोग किसी के खेत पर 'रे' जाते हैं।"[8] इसके परिणाम में सभी गाँव वालों को अपने खेत पर भी सभी आदमियों की सहायता मिलती है।

सा-ताल्ल एक वाद्य यंत्र है। इसको पूर्वजों के प्रति आदरणीय भवन का प्रतीक मन जाता है। इस बहुत कीमती और जीवित भी माना जाता है। 'मई (मौसी)' नामक शीर्षक में लेखिका इसका उल्लेख करती हैं। अगर परिवार के ज्येष्ठ पुत्र योग्य माने जाते हैं तो परंपरा के अनुसार उनको दिया जाता है। उनकी पत्नी इस यंत्र से संवाद करके इसमें चावल का भीगा आता का लेप लगती हैं। इस समय अपने पूर्वजों का स्मरण किया जाता है। पूर्वजों के प्रति आदरणीय भावना महसूस करके रिश्तेदारों और गाँव वालों को सामूहिक भोजन खिलाया जाता है। इस अवसर पर घोषणा कर दिया जाता है - "यह खानदान और पूरे गाँव का रक्षा करने वाला है। सदियों से मनुष्य के पारिवारिक वंश परंपरा के साथ यात्रा करता आया है। इसमें अनगिनत पूर्वजों की आत्माओं का वास है। ये आत्माएँ कुल की रक्षा करती हैं। यह विशाल वृक्ष है जिसके तले कुल और वंश जिंदा रहते हैं।"[9]

न्योकुम शब्द का अर्थ पर लेखिका स्पष्ट करती हैं - "न्योक अर्थात धरती के सभी स्थान तथा हाकुम अर्थात इकट्ठे होना।"[10] इसका अर्थ माना जाता है कि पृथ्वी के हर स्थान जैसे पशु-पक्षी, जंगल, नदी, पहाड़, खाई, मनुष्य और उनके पूर्वज आदि सभी अदृश्य शक्तियाँ का एकत्रित होना। इस पूजा के दार्शनिक तात्पर्य पर लेखिका बताती हैं - "प्राकृति एक है - उसी का हम सब भिन्न-भिन्न रूप है। मनुष्य इनसे अलग नहीं है। यही केन्द्र सामूहिकता की भावना को मजबूत करता है। इसी भाव को केन्द्र में रखकर सामाजिक नियम-व्यवस्थाएँ बनाई गईं। कई पूर्वज-प्रतीक चिह्नों में भी इसे देखा जा सकता है।"[11] न्योकुम उई प्रकृति पूजा से संबंधित कर्मकांड है। यह खेतों में धान के फसलों को बीए जाने के बाद होनेवाला एक आध्यात्मिक उत्सव होता है। इस पूजा का ज़िक्र लेखिका इस प्रकार करती हैं - "पूरा एक महीना धरती-आसमान, सूर्य-चन्द्र, जंगल, पहाड़, नदी, पेड़-पौधे, फ़सल इत्यादि की आत्माओं का आवाहन न्यूब द्वारा होता रहा। xxx प्रकृति की आत्माओं - जो नकारात्मक और सकारात्मक होती हैं - को सूर्योदय और सूर्यास्त के अनुसार स्वागत और विदा करने के उद्देश्य से किया जाता है। इसी के अनुसार घर का द्वार-दरवाजा भी जिंदा मन गया है।"[12] इस वक्त जंगली पशु-पक्षी को नहीं मारना, जंगली सब्जियाँ और फल कुछ दिनों के लिए नहीं खाना, साबुन और तेल जैसे चीज़ों को इस्तेमाल नहीं करना आदि। अर्थात इस समय धरती पर किसी भी चोट नहीं होती। इस समय खेतों में भी कुछ भी काम नहीं होता। कहीं न जाकर लोग अपने गाँव में रहते और किसी को गाँव के अन्दर नहीं आने देते हैं। जोर से बोलना और चिल्लाना की मनाही होती है और शांत से बात करनी पड़ती है।

लोक-कला हर समुदाय की रागात्मक भावना का उद्घाटन है। न्योकुम उई के अवसर पर सभी गाँव वालों अपने-अपने घर से भोजन तैयार करके ले आते हैं। वेदी के चारों ओर दल बाँधकर अच्छी तरह नाचते-गाते हैं। वेदी के चारों ओर तीन गहरे बनकर नाच करते हैं। प्रथम गोल घेरा स्त्रियों का होता है जो वेदी के पास होता है। इस प्रथम पंक्ति में स्त्रियाँ 'रिखाम-पादा' नामक एक

लोकगीत को गाकर नृत्य करती हैं। पहले एक ही स्त्री गाती है, उसका अनुसरण बाकी स्त्रियाँ करती हैं। दूसरी पंक्ति पुरुष के लिए है, जिसमें पुरुषों स्त्रियों की ओर गोल घेरते हुए एक दूसरे का हाथ थामते हुए 'बुईया' नामक नृत्य करते हैं। इस प्रकार प्रकृति, सृष्टि-निर्माण, पूर्वज जैसे विषयों को लेकर लोक गीतों का गायन होता है। अपने शेरीर के अहं मिटाने के लिए 'न्योकुम दापो' का स्मरण किया जाता है। 'दापो' प्रकृति और मनुष्य की सीमा का प्रतीक है।

इस प्रकार मिथुन और स्त्रियों के बाल को तुलना करने वाली न्यीशी भाषा की एक लोक गीत का ज़िक्र 'मूक रिश्ते' नामक शीर्षक के अंतर्गत हुआ है -

"हिन्त लो पोपी रिंगा लो /बिन्यी लो पोबा रिंगा लो

हिन्त पोपी रिंग बा पोबा रिंग /सोली आईकू..."[13]

भारतीय जनजातीय समुदायों में जनजातीय पहचान और संस्कृति को आकार देने में भाषा महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यह समूह पहचान का एक शक्तिशाली संकेतक है और सांस्कृतिक समुदायों के अस्तित्व में योगदान देता है। भाषा आपस में बातचीत करने का साधन मात्र नहीं है, खास तौर से देखने पर भाषा और संस्कृति के बीच एक अद्‌वितीय और गहरा संबंध होता है। भाषा किसी भी समुदाय के सांस्कृतिक मूल्यों का अभिव्यक्ति है। इस प्रकार इस संस्मरण में न्यीशी भाषा के शब्दों और पंक्तियाँ का उल्लेख इस समुदाय की अस्मिता को दर्शाते हैं - जैसे यापाम (जंगल की अदृश्य शक्ति), डंडा (धान कूटने की लकड़ी), पोस्पोई (एक प्रकार की पौधा), तअर पोख (एक प्रकार का मेढक), न्यूब (पुजारी), न्योरा तानी (जंगल प्राणी), तापुक (धान पौधा), पूतुंग (टीला), ओप्पो (स्थानीय दारू), न्येदा (विवाह), बो (श्रीमान), आने दोंयी (सूरज माता) आदि। न्यीशी समाज के पशु-पक्षी का लगाव लेखिका की माँ उल्लू को धन्यवाद देने पर स्पष्ट होता है - "पायालिंचो ततबर अ, आम्पाक लिदे आइकुबो।"[14] लेखिका एक कहावत का ज़िक्र करती हैं -

"ल्याप्ताम ताब्खियनाम"[15] अर्थात अगर किसी व्यक्ति एक बार जो चीज किसी को दे देने के बाद वापस माँग लेता तो दरवाजा उसके ऊपर गिर जाएगा। लेखिका न्यीशी न्योकुम महोत्सव के बारे में इस सूक्ति का उल्लेख करती हैं - "मलंग न्गे अलियुम देकु, न्गों रोहो हाग मल दोयाकुबे अर्थात होता है कि सब जा रहे हैं, मैं समूह से कटकर, अकेला रहकर क्या करूँगा।"[16]

निष्कर्ष :

न्यीशी समुदाय के पारम्परिक रीति-रिवाज़ें और उनकी संस्कृति से जुड़ी न्यीशी भाषा उनकी अद्वितीय विशिष्टता को दर्शाते हैं। विविधता की बल से आगे चलते भारत जैसे देश में इस तरह के आदिवासी समाजों की निजी अस्मिता और विविधता का सांस्कृतिक प्रदर्शन को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

संदर्भ :

1. गाय-गेका की औरतें, जोराम यालाम नाबाम, राजकमल प्रकाशन, पहला संस्करण-2023, पृ.सं.103
2. वही, पृ.सं. 24
3. वही, पृ.सं. 25
4. वही, पृ.सं. 25
5. वही, पृ.सं. 26
6. वही, पृ.सं. 26,27
7. वही, पृ.सं. 62
8. वही, पृ.सं. 66
9. वही, पृ.सं. 98

10.वही, पृ.सं. 110

11.वही, पृ.सं. 110

12.वही, पृ.सं. 107

13.वही, पृ.सं. 34

14.वही, पृ.सं. 48

15.वही, पृ.सं. 107

16.वही, पृ.सं. 114